शिक्षा द्वारा सभ्यता

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

शिक्षा से मानव शिक्षित होता है। शिक्षा मानव के व्यक्तित्व में आमूल–चूल परिवर्तन कर देती है। सभ्य समाज में शिक्षा की महती आवश्यकता होती है। जिस समाज में शिक्षा का जितना अधिक प्रचार–प्रसार होता है वह समाज उतना ही शिक्षित और प्रतिष्ठित माना जाता है। शिक्षा के बिना व्यक्तित्व विकास संभव नहीं है। वैदिक काल से लेकर के आज तक की प्रचलित शिक्षा व्यवस्था में कई परिवर्तन देखे गये है। वैदिक काल में पुरुषों और स्त्रियों को शिक्षा का समान अधिकार प्राप्त था। स्त्रियां भी वैदिक सूत्रों की रचनाकार हुई है। पुरुषों के समान स्त्रियां भी सामाजिक समारोह और धार्मिक समारोह में समान रूप से भाग लेती थी। प्राचीन काल में शिक्षा की गुरूकुल व्यवस्था प्रचलित थी। इसमें शिष्य गुरू के पास जाकर के जीवन निर्माण के लिए शिक्षा ग्रहण करता था। गुरूकुल व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था थी जहां पर विद्यार्थी और गुरू बड़े ही आत्मीय भाव से रहा करते थे। विद्यार्थी के जीवन का प्रारंभिक पच्चीस वर्ष जिसे ब्रह्मचर्य आश्रम कहा जाता था, में शिक्षा ग्रहण के लिये निर्धारित था। ब्रह्मचर्य आश्रम का तात्पर्य है कि विद्यार्थी घर से दूर गुरू के आश्रम में जाकर विद्या ग्रहण करे। आश्रम के व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी विद्यार्थियों के ऊपर रहती थी। प्रसिद्ध आचार्यों के गुरूकुल में पढ़े हुए छात्रों का सब जगह बहुत सम्मान होता था। भगवान राम ने गुरू वशिष्ठ के आश्रम मे रहकर शिक्षा ग्रहण कि थी। पाण्डवों ने गुरू द्रोणाचार्य से शिक्षा ग्रहण की थी। गुरूकुल आश्रमों में हजारों विद्यार्थी रहते थे। आश्रमों के प्रधान को कुलपति कहा जाता था। रामायण काल में वशिष्ठ का वृहद् आश्रम था, जहां राजा दिलीप तपश्चर्या करने गये थे, जहां विश्वामित्र को ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ था। भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में अनौपचारिक तथा औपचारिक दोनों प्रकार के शैक्षणिक केन्द्रों का उल्लेख प्राप्त होता है। औपचारिक शिक्षा केन्द्रों में शिक्षा आश्रमों और गुरूकुलों के माध्यम से दी जाती थी। ये ही शिक्षा के उच्च केन्द्र ही थे जबकि परिवार, पुरोहित, पण्डित, सन्यांसी इत्यादि के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती थी। विभिन्न धर्म सूत्रों में और भारत के प्राचीन ग्रंथों से यह ज्ञात होता है कि माता ही बच्चों

की श्रेष्ठ गुरू है। जैसे–जैसे सामाजिक विकास हुआ वैसे–वैसे शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित होने लगी। गुरूकुल की यह स्थापना प्रायः वनों, उपवनों तथा ग्रामों में की जाती थी। अधिकतर दार्शनिक आचार्य निरजन वनों में निवास, अध्ययन तथा चिंतन पसंद करते थे। गुरूकुलों में व्याकरण, ज्योतिष, धनुर्विद्या, साहित्य, गणित, विज्ञान, खगोल, भुगोल, दर्शन इत्यादि का ज्ञान कराया जाता था। आश्रमों में सामग्री एकत्रित करने के लिये आश्रमों में रहने वाले शिक्षार्थी भिक्षाटन के द्वारा जिविकोपार्जन करते थे। स्वजातियों से भिक्षायाचना करने में उनके पक्षपात तथा ब्रह्मचारी के गृह की और आकर्षण का भय भी रहता था। अतः स्वजातियों से भिक्षायाचना का निषेध था। तीर्थ स्थानों की और भी विद्वान आकृष्ट होते थे और वहां भी शिक्षा के प्रमुख केन्द्र थे। सार्वजनिक शिक्षण संस्थाएं बौद्ध विहारों में भी स्थापित हुई थी। भगवान बुद्ध ने उपासकों की शिक्षा दीक्षा पर अधिक बल दिया था। इनमें धार्मिक विषयों का अध्ययन और आध्यात्मिक विषयों का अभ्यास कराया जाता था। धीरे–धीरे शिक्षा का विकास होता गया और आज शिक्षा की जो व्यवस्था प्रचलित है वह एक आदर्श व्यवस्था है। इस शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत सभी धर्मों और जातियों के विद्यार्थी समान रूप से शिक्षा ग्रहण कर सकते है। आजकल शिक्षा को आजीविका से जोड़ने का प्रयास हो रहा है। इस कारण से व्यक्तित्व निर्माण के साथ ही साथ आजीविका का प्राप्त होना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य हो गया है। बहुत पहले महात्मा गांधी ने कहा था कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे व्यक्तित्व निर्माण के साथ ज्ञान की वृद्धि हो। आजकल उच्च शिक्षा के लिए विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के माध्यम से उच्च शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। ऐसे केन्द्रों पर विद्यार्थी अपनी रूचि और सामर्थ्य के अनुसार शिक्षा ग्रहण करते है और अपने जीवन का निर्माण करते है। शिक्षा के विकास के लिए समय–समय पर सरकार आयोगों का गठन करती है और शिक्षा के स्वरूप में बदलाव के लिए क्या किया जाना चाहिए इस विषय पर आयोग से राय मांगती है। इसी का परिणाम है कि समय–समय पर शिक्षा का स्वरूप बदलता रहा है। दुर्भाग्य की बात यह है कि स्वतंत्रता के बाद विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा और प्राविधिक शिक्षा का स्तर तो बढ़ा है परन्तु प्राथमिक शिक्षा का आधार कमजोर होता चला गया। शिक्षा का लक्ष्य राष्ट्रीयता, चरित्र निर्माण वह मानव संसाधन विकास के स्थान पर मशीनीकरण रहा। देश में प्रौढ शिक्षा और साक्षरता

के नाम पर समय–समय पर अनेक योजनाएं चलायी जाती रहती है किन्तु जितना लाभ समाज को मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पाता। समाज का सबसे निचला वर्ग जब तक शिक्षित नहीं हो सकता तब तक पूर्ण सभ्यता की कल्पना बेईमानी होगी। अतः समाज के हर वर्ग को शिक्षित करने का प्रयास करना चाहिए। वर्तमान शिक्षा प्रणाली गैर तकनीकी छात्र–छात्राओं की एक ऐसी फौज तैयार कर रही है जो अन्ततोगत्वा अपने परिवार व समाज पर बोझ बनकर रह जाती है। अतः शिक्षा को राष्ट्र निर्माण से जोड़ने की नितान्त आवश्यकता है। एक सभ्य समाज में ही शिक्षा की उत्तम व्यवस्था हो सकती है। अहिंसा परमोधर्मः के माध्यम से अहिंसा का प्रशिक्षण भी लोगों में होना चाहिए।